आशा पारस वहुविषयक भारतीय शोध-पत्रिका
अर्द्धवार्षिक सहकर्मी-समीक्षित(PEER REVIEWED) शोध-पत्रिका
खंड -1, अंक-1, अप्रैल-सितंबर 2025 (प्रवेशांक), apvbsp@gmail.com www.apvbsp.com

भौतिकवाद और मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्ववाद) में सुख की अवधारणा : एक दार्शनिक तुलनात्मक अध्ययन

सुनील छानवाल
निदेशक प्रभारी, दर्शन एवं थियोलॉजिकल स्टडीज़ स्कूल,
एल.जे. विश्वविद्यालय, अहमदाबाद, गुजरात, भारत
sunilchhanwal@gmail.com

शोध सारांश

सुख मानव जीवन की मौलिक आवश्यकता है, किंतु विभिन्न दार्शनिक परंपराएँ इसे भिन्न रूप में व्याख्यायित करती हैं। भौतिकवाद सुख को इन्द्रिय तृप्ति और बाह्य संसाधनों पर आधारित मानता है [1][2][3], जबकि आचार्य ए. नागराज के मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्ववाद) में दीर्घ सुख जो संबंधों में मूल्य के रूप में और निरंतर सुख जो समझदारी में पाया जाता है। यह सुख, मानवीयता और अतिमानवीयता में ही है । अतिमानवीयता में मानव धीरता, वीरता, उदारता से जीता है और अति मानवीयता में दया कृपा करुणा से जीता । निरंतर सुख व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र /अंतर्राष्ट्र में उपयोगिता - पूरकता पूर्वक स्थापित होता है [4][5]। यह शोध-पत्र दोनों दृष्टिकोणों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, विशेषतः ज्ञानमीमांसा और नीतिशास्त्र के संदर्भ में। निष्कर्षतः भौतिकवाद क्षणिक सुख का प्रतिपादन करता है, जबकि सह-अस्तित्ववाद स्थायी और सार्वभौमिक सुख की संभावना प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द : सुख, भौतिकवाद, मध्यस्थ दर्शन, सह-अस्तित्ववाद, ज्ञानमीमांसा, नीतिशास्त्र

परिचय

मानव जीवन का लक्ष्य प्रायः सुख-प्राप्ति माना गया है। पश्चिमी परंपरा में भौतिकवाद का उद्गम यूनानी दार्शनिक एपिक्यूरस से माना जाता है [6], जो सुख को इन्द्रियानुभूति और पीड़ा की अनुपस्थिति से जोड़ते हैं। आधुनिक काल में भौतिकवाद वैज्ञानिक यथार्थवाद और उपभोक्तावाद से जुड़ गया [1][7][8]।भारतीय परंपरा में लोकायत (चार्वाक) दर्शन भी इसी प्रकार सुख को भौतिक इन्द्रिय-तृप्ति से जोड़ता है। मूल विचार, सुख वह है जो सीधे अनुभव से प्राप्त होता है, यानी प्रमाणित इंद्रिय-आनंद और दर्द-निरोध। शरीर आधारित सुख, वस्तुओं के संपर्क से मिलने वाले इंद्रिय-संवेग (दृष्टि, श्रवण, स्पर्श, रसना, गंध) और उनसे उत्पन्न आनंद ही वास्तविक सुख हैं। दर्द-निरोध, सुख का एक आवश्यक अंग दर्द-निरोध है; अगर दर्द नहीं है, तो सुख है, और यदि दर्द है तो सुख नहीं[9][10]।

इसके विकल्प, श्रद्धेय ए. नागराज के मध्यस्थ दर्शन, जीवन को केंद्र में रखत है और सुख को उसकी मौलिक आवश्यकता मानता है। यह सुख, मानवीयता और अतिमानवीयता में ही है । अतिमानवीयता में मानव धीरता, वीरता, उदारता से जीता है और अति मानवीयता में दया कृपा करुणा से जीता । अमानवीयता में मानव दिंनत, हीनता, क्रूरता पूर्वक जीने के कारण दुख में रहता है। यह सुख, मानवीयता को समझने से ही संभव है। मानव जब अखंड समाज और मानवीय व्यवस्था के साथ जीता है तब हर व्यक्ति सुख से जी पता है। [4][11]।

कार्यप्रणाली

यह अध्ययन तुलनात्मक दार्शनिक पद्धति पर आधारित है।
प्राथमिक स्रोत : नागराज (1999) [4]।
द्वितीयक स्रोत : भौतिकवाद एवं उपयोगितावाद पर आधारित कार्य जैसे Bentham [12], O'Keefe [6], Davies [7], Smart [2], Bhattacharya [9]।
तुलनात्मक मानदंड : (1) सुख की परिभाषा, (2) ज्ञानमीमांसा, (3) नीतिशास्त्र, (4) सामाजिक परिणाम।

साहित्य की समीक्षा: दार्शनिक दृष्टिकोण

मध्यस्थ दर्शन सह अस्तित्व वाद (ऐ. नाराज)

विश्राम के लिये ही इस पृथ्वी पर मानव अपने महत्व को जानने, पहचानने के प्रयास एवं प्रयोग में व्यस्त है। नागराज जी के द्वारा मध्यस्थ दर्शन के अनुसार मानव सुख धर्मी है। वह निरंतर सुख पूर्वक जीना चाहता है। मानव के मन में निरंतर सुख पूर्वक जीने की आशा है। यह सुख पूर्वक जीने की आशा संबंधों में मूल्य पूर्वक जीने से पूरी होती है । मध्य दर्शन के अनुसार अध्ययन करने की जो वस्तु है वह अस्तित्व है । अस्तित्व को ही जानने, मानने,पहचानने और निर्वाह करने की आवश्यकता है।

अस्तित्व में दो वास्तविकता है एक क्रियाशून्य जैसे व्यापक, न्याय, धर्म, सत्य, नियम, नियंत्रण, संतुलन और दूसरी क्रियाशील जैसे की जड़ और चैतन्य। जड़ के रूप में पदार्थ अवस्था, प्राण अवस्था, जीव अवस्था का शरीर, और मानव शरीर। चैतन्य के रूप में जीवन जो जीव अवस्था और ज्ञान अवस्था के शरीर को चलाता है। अस्तित्व में हर एक इकाई जो क्रियाशील है उसका कारण क्रियाशून्य है । अस्तित्व में हर इकाई निश्चित नियम के कारण नियंत्रित है । अस्तित्व में नियति क्रम है, विकास क्रम विकास जागृति क्रम जागृति है । अपनी धरती पर तीनों अवस्थाएं अपने आचरण में है। जैसे की पदार्थ अवस्था, प्राण अवस्था और जीव अवस्था, केवल मानव ही नियम पूर्वक नहीं जी पा रहा क्योंकि मानव में जो नियम है वह न्याय है। न्याय में ही मानव एक होकर जी पता है, चाहे वह परिवार, समाज राष्ट्र या अंतरराष्ट्रीय हो यहां न्याय को परिभाषित करा गया है। कि संबंधों की पहचान सहित मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन, फलन में परस्पर तृप्ति व उभय तृप्ति, वर्तमान में विश्वास। मध्यस्थ दर्शन के अनुसार मानव नियति क्रम के कारण अमानवीयता से मानवीयता और अतिमनव्यता में गुणात्मक परिमार्जन होता है।

अपनी धरती पर एक भी व्यक्ति निरंतर सुख पूर्वक एक भी संबंध में नहीं जी पा रहा है। इसका कारण यह है की शरीर तो मानव का है पर चेतन जीवो जैसी है। मध्यस्थ दर्शन के अनुसार जीव चेतना से मानव चेतना में गुणात्मक परिमार्जन पूर्वक ही मानव निरंतर सुख से जी सकता है।

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार सुख, न्यायपूर्ण व्यवहार एवं धर्मपूर्ण विचार (समाधान) का फलन ही है। व्यक्ति में सुख, समाधान के रूप में। परिवार में शांति, समृद्धि के रूप में। समाज में संतोष, अभय के रूप में। और राष्ट्र में आनंद, मानवीय व्यवस्था के रूप में प्रमाणित होता है।

अकेले में मानव के जीवन का में कोई कार्यक्रम, व्यवहार एवं उत्पादन सिद्ध नहीं होता है। इस पृथ्वी पर मानव अधिकतम विकसित इकाई है। इससे विकसित इकाई इस पृथ्वी पर परिलक्षित नहीं है। मानव इसीलिए विकसित इकाई सिद्ध हुआ है, क्योंकि

1. वह मानवेतर सृष्टि के उपयोग, सदुपयोग, शोषण एवं पोषण में सक्षम है।

2. मानव तथा मानवेतर तीनों सृष्टि में पाए जाने वाले गुण, स्वभाव एवं धर्म का ज्ञाता मानव ही है।

3. मानवेत्तर सृष्टि में न पाये जाने वाले स्वभाव, व्यवहार एवं अनुभूति को मानव में पाया जाता है।

एक से अधिक मानव एकत्र या संगठित होने को परिवार, समुदाय व अखण्ड समाज संज्ञा है। जागृत मानव परम्परा में सार्वभौम व्यवस्था पूर्वक अखण्ड समाज प्रमाणित होता है। [4][11]।

उपरिवर्णित आधार पर अध्ययन करने पर मानव प्रवृत्तियों की कुल तीन प्रकार से गणना होती है :

1. अमानवीयता 2. मानवीयता 3. अतिमानवीयता।

	स्वभाव	विषय	दृष्टि
अमानवीयता	दीनता :- अपने दुःख को दूसरों से दूर कराने हेतु जो आश्रय प्रवृत्ति है। हीनता :- विश्वासघात पूर्वक जीना (छल, कपट, दम्भ, पाखण्ड) क्रूरता : स्व-अस्तित्व को बनाए रखने के लिए बलपूर्वक दूसरे के अस्तित्व को मिटाने में जो वैचारिक प्रयुक्ति तथा शोषण कार्य है, उसे क्रूरता कहते हैं।	आहार, निद्रा, भय एवम् मैथुन	प्रियाप्रिय, हिताहित एवम् लाभालाभ
मानवीयता	धीरता :न्याय के प्रति निष्ठा एवं दृढ़ता। वीरता : दूसरों को न्याय उपलब्ध कराने में अपने	पुत्रेषणा, वित्तेषणा एवं लोकेषणा	न्यायान्याय, धर्माधर्म एवं सत्यासत्य

	बौद्धिक एवं भोतिक शक्तियों को नियोजित करने की प्रवृत्ति ही वीरता है। उदारता : अपनी सुख सुविधाओं को अर्थात् तन, मन, धन को प्रसन्नता पूर्वक दूसरों के लिए उपयोगिता, सदउपयोगिता विधि से नियोजित करने की प्रवृत्ति ही उदारता है।		
अतिमानवीयता	दया : जिनमें पात्रता हो, परंतु उसके अनुरूप वस्तु उपलब्ध न हो, ऐसी स्थिति में उसे वस्तु उपलब्ध कराने हेतु की गयी प्रयुक्ति ही दया है। कृपा : वस्तु समीचीन है पर उसके अनुरूप पात्रता अर्थात् मानवीयतापूर्ण दृष्टि नहीं है, उनको पात्रता उपलब्ध कराने वाली प्रयुक्ति कृपा है । करुणा : जिनमें पात्रता न हो और वस्तु भी समीचीन न हों, उनको उसे उपलब्ध कराने वाली प्रयुक्ति ही करुणा है।	सत्य (सह-अस्तित्व रूपी परम सत्य)	मात्र सत्य

द्वितीयक स्रोत

O'Keefe (2010) की पुस्तक *Epicureanism* इस परंपरा का व्यवस्थित अध्ययन प्रस्तुत करती है, और बताती है कि एपिक्यूरियन भौतिकवाद परमाणु-सिद्धांत और अनुभव-आधारित सुखवाद पर आधारित है। एपिक्यूरस (341–270 ई.पू.) कहना था कि "सुख सर्वोच्च भलाई है" और पीड़ा से बचना मानव का स्वाभाविक प्रयोजन है। लेकिन वे केवल इन्द्रिय-सुख को ही महत्वपूर्ण नहीं मानते थे, बल्कि मन की शांति और भय-मुक्त जीवन को भी आवश्यक बताते थे। वे देवताओं और मृत्यु के भय को भ्रम मानते थे, क्योंकि मृत्यु केवल शरीर की समाप्ति है, आत्मा कोई शाश्वत सत्ता नहीं है।

एपिक्यूरस का हेडोनिज़्म - सुख को जीवन का एकमात्र आंतरिक लक्ष्य मानता है, लेकिन यह कामुक भोग-विलास नहीं बल्कि शांति और निर्भयता की अवस्था है। दो प्रकार के सुख - "कैटास्टेमैटिक" (स्थिर सुख) जैसे मानसिक शांति और "काइनेटिक" (गतिशील सुख) जैसे तात्कालिक आनंद, जिसमें पहले को प्राथमिकता दी गई। इच्छाओं का वर्गीकरण - प्राकृतिक और आवश्यक (भोजन, नींद), प्राकृतिक लेकिन अनावश्यक (यौन सुख), और व्यर्थ इच्छाएं (अमरता की चाह) में विभाजन। अतारैक्सिया का सिद्धांत - मानसिक शांति और निर्विकारता की अवस्था प्राप्त करना, जो सभी भयों और चिंताओं से मुक्ति दिलाती है। दर्द से मुक्ति - "अपोनिया" (शारीरिक

दर्द से मुक्ति) और "अतारैक्सिया" (मानसिक व्याकुलता से मुक्ति) को सच्चे सुख के रूप में देखना। मित्रता की महत्ता - सुखी जीवन के लिए विश्वसनीय मित्रों का नेटवर्क सबसे महत्वपूर्ण साधन माना गया, जो सुरक्षा और भावनात्मक समर्थन प्रदान करता है। सीमित इच्छाओं का दर्शन - केवल आवश्यक इच्छाओं की पूर्ति करके जीवन में संतुष्टि पाना, अनावश्यक लालसाओं से बचना। वर्तमान क्षण पर फोकस - भविष्य की चिंता या अतीत के पछतावे में न फंसकर वर्तमान में उपलब्ध सुख को पहचानना और अनुभव करना। बुद्धिमत्ता और सुख का संबंध - फ्रोनेसिस (व्यावहारिक बुद्धि) के द्वारा यह समझना कि कौन से सुख वास्तव में लाभकारी हैं और कौन से हानिकारक। आध्यात्मिक स्वतंत्रता - अंधविश्वास, मृत्यु के भय और सामाजिक दबावों से मुक्त होकर स्वयं के लिए सुख का चुनाव करने की स्वतंत्रता प्राप्त करना।

जेरेमी बेंथम (1748–1832) ने *An Introduction to the Principles of Morals and Legislation* (1789) में उपयोगितावाद की नींव रखी। बेंथम के अनुसार मनुष्य दो चीजों के साथ पैदा होता है परम सुख और परम दुख । जो सुख कार्यों में वृद्धि करें और दुख कार्यों में कमी करें वही उपयोगितावाद है । जिन चीजों को करने सेआपको खुशी मिलती हो वही उपयोगितावाद है ।

उनका सूत्र था, "सबसे अधिक लोगों के लिए सबसे अधिक सुख" । यह सूत्र के अनुसार किसी भी देश में इस तरह की नीतियां होनी चाहिए जिससे अधिकतम लोग सुखी और प्रसन्न रहे । बेंथम के अनुसार हर चीज में खुशी है । उनका कहना है जिस वस्तु में मनुष्य को सुख मिले उसे वही चीज करनी चाहिए । उदाहरण के तौर पर कोई व्यक्ति कबड्डी खेल रहा है और दूसरा व्यक्ति पढ़ रहा है तो दोनों को सामान तरीके का सुख मिल रहा है । सुख और दुख काल्पनिक नहीं है इन्हें नापा जा सकता है. यह नापतोल की वस्तु है. यह कोई आत्मपूरक अनुभूतियां नहीं बल्कि वस्तु परक मानदंड नहीं बेंथम ने सुख को गणनात्मक माना और इसके लिए "Hedonic Calculus" विकसित किया, जिसमें 7 मानदंड थे,तीव्रता , अवधि , निश्चितता , निकटता , उत्पादकता , शुद्धता , और व्यापकता । बेंथम के अनुसार, सुख और पीड़ा ही नैतिकता के अंतिम आधार हैं, जो सुख को बढ़ाए वही नैतिक, और जो पीड़ा बढ़ाए वह अनैतिक।

बाद में जॉन स्टुअर्ट मिल ने इसमें गुणात्मक आयाम जोड़ा और कहा कि मानसिक व बौद्धिक सुख, इन्द्रिय-सुख से उच्चतर हैं। [12]

भारतीय भौतिकवाद का प्रतिनिधित्व चार्वाक/लोकायत दर्शन करता है, जिसकी परंपरा 600 ई.पू. से मानी जाती है। इसका मूल सिद्धांत था: "प्रत्यक्ष ही प्रमाण है" — अर्थात इन्द्रियानुभूति के अतिरिक्त कोई स्वतंत्र ज्ञान का स्रोत नहीं। चार्वाकों के अनुसार, आत्मा, परमात्मा, पुनर्जन्म, कर्मफल, मोक्ष आदि कल्पनाएँ निराधार हैं।

उनका सूत्र वाक्य था, "यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।"

(जब तक जीवित हो सुख से जीओ; ऋण लेकर भी घी पियो।)

सुख का आधार था, इन्द्रिय तृप्ति और भौतिक भोग । रजनीश भट्टाचार्य (2018) की पुस्तक *Materialism: The*

East and the West में लोकायत को पश्चिमी भौतिकवाद (Epicureanism और आधुनिक वैज्ञानिक यथार्थवाद) के समानांतर रखकर देखा गया है। [9]

चर्चा

1. सुख की परिभाषा और आधार

भौतिकवाद में सुख इन्द्रिय तृप्ति और भौतिक वस्तुओं से प्राप्त माना गया है. संक्षेप में भौतिकवाद/मैटेरियलिज्म के दृष्टिकोण से सुख आम तौर पर एक दार्शनिक-वैज्ञानिक इकाई के रूप में समझा जाता है। यह तत्काल अनुभव (इंद्रिय-प्राप्त आनंद) या मस्तिष्क/शारीरिक अवस्थाओं से जुड़ा होता है, और "ठोस"/अविभाज्य भौतिक कारणों से आंका जाता है। किसी गैर-भौतिक आत्म-आनंद या मोक्ष जैसे अघोषित तत्व इन पर नहीं निर्भर होते। सुख को मुख्य रूप से शरीर-आनंद और दर्द के संतुलन से मापा जाने वाला परिणाम-आधारित सिद्धांत है। [1][2][7]। उपभोक्तावादी समाज भी इस दृष्टि को और गहराता है। भौतिकवाद व्यक्ति अपने आप को शरीर मानकर जीता है और संवेदनाओं में ही सुख को तलाशता है। मानव की चाहना निरंतर सुख की है, जो इंद्रियों में नहीं मिल पाती यह कारण से मानव दुखी रहता है। भौतिकवाद के अनुसार मानव संग्रह, सुविधा विधि से जीता है, और भोग के अर्थ में जीते है[8][13]।
मध्यस्थ दर्शन के अनुसार, सुख जीवन की मौलिक आवश्यकता है, जो मानवीयता के ज्ञान से संभव है। मानवीयता पूर्वक मानव स्वयं में व्यवस्था समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है . मानव अमानवीयता में दुख पूर्वक जीता है और मानवीयता और अतिमनव्यता में मानव सुख पूर्वक जी पता है. मानव का धर्म सुख, शान्ति, संतोष एवं आनन्द है। मानव अनुभव के पश्चात ही नैतिकता पूर्वक मानव व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह कर पता है, चरित्र पूर्वक व्यवहार करता है, और संबंध, मूल्य, मूल्यांकन, उभय तृप्ति पूर्वक जी पता है। यही सुख, सुंदर और समाधान पूर्वक जीने की कला का स्वरूप है[4][5][11]।

2. ज्ञानमीमांसा

भौतिकवाद अनुभवजन्य (empirical) दृष्टि को ही ज्ञान मानता है [2][10]भौतिकवादी यह मानते हैं कि ईश्वर का कोई अस्तित्व नहीं है [7]। चार्वाक दर्शन भी प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता था [9]। सुख-दर्द का आकलन करने के लिए जेरेमी बेंथम के हेडोनिक कैलकुलस (Hedonic Calculus) दिया वह इस प्रकार हैं:

1. तीव्रता / प्रबलता – सुख या दुख की शक्ति/ज़ोर कितना है।
2. अवधि / स्थायित्व – सुख या दुख कितने समय तक रहेगा।
3. निश्चितता / निश्चयता – सुख या दुख होने की संभावना कितनी निश्चित है।
4. निकटता / समीपता – सुख या दुख कब अनुभव होगा (तुरंत या भविष्य में)।
5. प्रजननशीलता / फलप्रदता – क्या यह सुख आगे और सुख पैदा करेगा या नहीं।

6. शुद्धता / निष्कलुषता – क्या यह सुख दुख से मुक्त है, या इसके साथ दुख भी आएगा।
7. विस्तार / व्यापकता – यह सुख या दुख कितने लोगों को प्रभावित करेगा।
   ये सभी मापदंड बेंथम ने सुख-दुख का मूल्यांकन करने के लिए दिए थे।

सुख एक मात्र अंतर्निहित अच्छाई है, सभी प्रकार के सुख समान माने जाते हैं (उच्चतर/नीचे अनुभवों के-मूल्य में भेद नहीं किया जाता)।

इसके विकल्प में, सह-अस्तित्ववाद अनुभव, व्यवहार और प्रयोग प्रमाण को आधार मानता है । यह दर्शन तात्विक, तार्किक और व्यवहारिक है। मानव जब दीनता, हीनता, क्रूरता पूर्वक जीता है तो यह पता चलता है कि वह अमानवीयता में जी रहा है। इसके विकल्प में मानव जब धीरता, वीरता, उदारता पूर्वक जीता है तो यह पता चलता है की वह मानवीयता पूर्वक जी रहा है। और मानव जब दया, कृपा, करुणा, पूर्वक जीता है तो यह पता चलता है कि वह अतिमानवीयता पूर्वक जी रहा है । यह एक समग्र और व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जो मानव-मानव, और मानव-प्रकृति के बीच संतुलन को स्थापित करता है [4][5][11]।

3. नीतिशास्त्र

भौतिकवाद में नैतिकता उपयोगितावादी सिद्धांत "सर्वाधिक लोगों के लिए सर्वाधिक सुख" पर आधारित है । नैतिकता का आधार, सुख-का-आधार नीचे से ऊपर तक इंद्रिय-आनंद और व्यक्तिगत शारीरिक सुख-प्राप्ति पर है। कठिन नैतिक नियमों की जगह व्यक्तिगत लाभ और अनुभव को प्राथमिकता दी जाती है। अधिक लोग अधिक आनंद और कम लोग अधिक दर्द पायें, यही नीति निर्धारण का आधार [12][14]। हम स्वयं वस्तु बन रहे हैं, हम इस कार्य में सहायता के लिए उपभोक्तावाद पर निर्भर हैं। हम उपभोग करने के लिए उपभोग करते हैं, और उपभोग किए जाते हैं, ताकि हम उपभोग कर सकें[8]।
मध्यस्थ दर्शन के अनुसार मानव नियति क्रम के कारण अमानवीयता से मानवीयता और अतिमनव्यता में गुणात्मक परिमार्जन होता है, तब धरती पर सुख, शांति, संतोष, आनंद सुनिश्चित होते हैं । सह-अस्तित्ववाद न्याय, पर आधारित है । न्याय का अर्थ है संबंध पूर्वक जीना फिर, दूसरों को नया पूर्वक जीना सीखना वह भी तन, मन, धन के नियोजन के साथ । जिसमें समझदारी और समृद्धि पूरी मानव जाति के लिए सर्व सुलभ होती है । इसका आदर्श है "सर्व शुभ मैं स्व-शुभ समाया रहता है" [4][5][11][15]।

4. सामाजिक परिणाम

भौतिकवाद समाज में उत्पादक शक्तियों को विमित किया, व्यक्तिवादी मानसिकता को जन्म दिया [5]। मानव भौतिकवाद में वस्तु की तरह बन चुका है, जिसे खरीदा जा रहा है, बेचा जा रहा है और समाज में वस्तु की तरह व्यवहार करा जा रहा है। भौतिकवाद क्षणिक सुख देता है, जिससे लालसा, प्रतिस्पर्धा और असंतोष उत्पन्न होता है चार्वाक धर्म, कर्म, मोक्ष आदि को अवास्तविक मानता है, आत्मा/परमात्मा जैसी धारणाओं को गलत मानते

है[7][8][13]।

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार मानवीयता का प्रमाण है अखंड समाज, यानी के इस धरती पर वर्ग से मुक्त होकर धरती एक राष्ट्र के रूप में। अतिमानवीयता का प्रमाण है के मानवीय व्यवस्था की परंपराएं बन जाना। सह-अस्तित्ववाद दीर्घ सुख, जो संबंधों में मूल्य के रूप में और निरंतर सुख जो समझदारी में पाया जाता है। निरंतर सुख व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र /अंतर्राष्ट्र में उपयोगिता - पूरकता पूर्वक स्थापित होता है [4][5][11]।

निष्कर्ष

तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भौतिकवाद और सह अस्तित्ववाद में लक्ष्य का भेद है। भौतिकवाद में जो लक्ष्य है वह है भोग और अतिभो, सहस्तित्व वाद का जो लक्ष्य है सुख, शांति, संतोष, आनंद है, जो मानवीयता और अतिमानवीयता से स्थापित होता है। यह संबंध पूर्वक व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और अंतरराष्ट्र उपयोगिता पूरक्ता पूर्वक जोड़ते हुए मानवीय व्यवस्था प्रमाणित करना।

भौतिकवाद में मानव अपने आप को शरीर मानकर जीता है और आशा करता है कि इंद्रियों में निरंतर सुख मिलेगा। चारों ओर के इंद्रिय-प्रधान, तत्काल सुख-प्राप्ति ही लक्ष्य है। अन्याय/कठिन दार्शनिक विमर्शों से ऊपर नहीं, यही चार्वाक का सुख-सिद्धांत है। सहस्तित्व वाद में समझदारी पूर्वक मानव को स्पष्ट होता है मानव, जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में है, और मानव संबंध पूर्वक दीर्घकालीन सुख में जी पाता है। संबंधों में ही मूल्य पूर्वक निरंतर सुख में जी पता। मूल्य जैसे कि विश्वास, स्नेह, सम्मान, कृतज्ञता से निरंतर सुख कि अनुभूति संबंधों में ही हो पाती है।

भौतिकवाद में सुख को बाह्य, इन्द्रिय, जो क्षणिक और अपूर्ण है। इसके विकल्प में, सह-अस्तित्ववाद में सुख को जीवन की मौलिक आवश्यकता और सह-अस्तित्व की समझ से जोड़ता है, जो स्थायी और सार्वभौमिक है।

भौतिकवाद और सह-अस्तित्ववाद में विधि का भेद है। भौतिकवाद की विधि संग्रह सुविधा है और सह-अस्तित्ववाद की जो विधि है अस्तित्व को समझना और समझना, न्याय पूर्वक जीना और जीना सीखाना, समृद्धि पूर्वक जीना और जीना सीखाना।

उपयोगितावादी भौतिकवाद नैतिकता और सामाजिक नीति को सुख के गणनात्मक सिद्धांत पर आधारित करता है, जो आज भी अर्थशास्त्र, राजनीति और विधि-निर्माण में प्रभावशाली है। एपिक्यूरस का मुख्य लक्ष्य था अंधविश्वास और मृत्यु के भय से मुक्ति दिलाना। उनका प्रसिद्ध "चौगुना इलाज" कहता है: "देवताओं से कोई भय नहीं, मृत्यु में कोई चिंता नहीं, अच्छाई प्राप्त करना आसान है, और बुराई सहन करना आसान है।" लोकायत भौतिकवाद एक प्रकार का चरम इन्द्रिय-सुखवाद है, जिसमें सामाजिक नैतिकता और दीर्घकालीन दृष्टिकोण का महत्व नहीं है।

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार भौतिकवाद में मानव अमानवीयता विधि से जीता है, जिस में स्वभाव दीनता, हीनता, कुरर्ता रहता है। अमानव, चार विषय और पांच इंद्रियों में जीता है,और दृष्टि प्रियाप्रिय, हिताहित एवम् लाभालाभ रहती है। मानवीयता और अतिमनव्यता में गुणात्मक परिमार्जन पूर्वक, मानव का स्वभाव धीरता, वीरता, उदारता, दया, कृपा, करुणा रहता है। मानवीयता मैं विषय पुत्रेषणा, वित्तेषणा एवं लोकेषणा रहता है और दृष्टि न्यायान्याय, धर्माधर्म एवं सत्यासत्य रहता है। अतिमानवीयता मैं विषय सत्य, सह-अस्तित्व रूपी परम सत्य (एषणा मुक्ति) रहता है और दृष्टि सत्य (मानवीय व्यवस्था) रहता है। मानवीयता और अतिमनव्यता में सुख, शांति, संतोष, आनंद सुनिश्चित होते हैं। अत, वर्तमान वैश्विक संकटों और असंतुलन की स्थिति में सह-अस्तित्ववादी दृष्टि अधिक प्रासंगिक है। मध्यस्थ दर्शन के द्वारा यह मंगल कामना किया है, 'भूमि स्वर्ग हो, मानव देवता हों, धर्म सफल हो, नित्य मंगल हो'।

संदर्भ सूची

1. आर्मस्ट्रॉन्ग, डी. एम. (संपा.). (1997). परिचय। ए वर्ल्ड ऑफ स्टेट्स ऑफ अफेयर्स (pp. 1–10). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। https://doi.org/10.1017/CBO9780511583308.002
2. दर्शन और वैज्ञानिक यथार्थवाद। (n.d.). रूटलेज एवं CRC प्रेस। 18 अगस्त 2025 को प्राप्त, https://www.routledge.com/Philosophy-and-Scientific-Realism/Smart/p/book/9780415849913
3. चर्चलैंड, पी. एम. (2013). मैटर एंड कॉन्शसनेस (तृतीय संस्करण)। एमआईटी प्रेस।
4. ए. नागराज। (n.d.). मध्यस्थ दर्शन, सहअस्तित्ववाद। 22 अगस्त 2025 को प्राप्त, http://archive.org/details/ZzManavVayavardarshanHindiEnglish2012
5. नम्बूदिरिपाद, ई. एम. एस. (1982). कला साहित्य और संस्कृति। वाणी प्रकाशन।
6. ओ'कीफ़, टी. (2014). एपिक्यूरियनिज़्म। रूटलेज। https://doi.org/10.4324/9781315711645
7. प्लेसा, पी. (2017). विलियम डेविस। द हैप्पीनेस इंडस्ट्री: हाउ द गवर्नमेंट एंड बिग बिजनेस सोल्ड अस वेल-बिंग। (लंदन, इंग्लैंड: वर्सो, 2016). 314 पृष्ठ। जर्नल ऑफ द हिस्ट्री ऑफ द बिहेवियरल साइंसेज़, 53(4), 391–393। https://doi.org/10.1002/jhbs.21857
8. पैटरसन, एम. (2011). जिग्मुंट बौमन, कंज़्यूमिंग लाइफ़। कनाडियन जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी। https://www.academia.edu/438935/Zygmunt_Bauman_Consuming_Life

9. सामग्रीवाद: पूर्व और पश्चिम। (n.d.). रिसर्चगेट। 20 अगस्त 2025 को प्राप्त, https://www.researchgate.net/publication/326017046_Materialism_the_East_and_the_West

10. लोकायत/चार्वाक – भारतीय भौतिकवाद | इंटरनेट इनसाइक्लोपीडिया ऑफ फिलॉसफी। (n.d.). 20 अगस्त 2025 को प्राप्त, https://iep.utm.edu/indmat/

11. ए. नागराज। (n.d.). मध्यस्थ दर्शन, सहअस्तित्ववाद। 22 अगस्त 2025 को प्राप्त, http://archive.org/details/ZzManavVayavardarshanHindiEnglish2012

12. बेंथम, जे. (1879). द प्रिंसिपल्स ऑफ मॉरल्स एंड लेजिस्लेशन। क्लेरेंडन प्रेस।

13. फ्रॉम, ई. (2005). टू हैव और टू बी? कॉन्टिनम।

14. मिल, जे. एस., क्रिस्प, आर. (संपा.). (1998). यूटिलिटेरियनिज़्म। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

15. एम. किरीटी भारद्वाज, आदित्य हेमंतराव अकोलकर, एवं मोहम्मद सिद्दीक़ आज़म। (2024). भारतीय दार्शनिक मानवीय मूल्यों का पश्चिमी दर्शन से तुलनात्मक अध्ययन। वर्ल्ड जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च एंड रिव्यूज़, 23(3), 2343–2351। https://doi.org/10.30574/wjarr.2024.23.3.2894